1905 के पहले कम्पनी काल में पुलिस की भूमिका

डॉ० कुन्दन कुमार सिंह*
चितरंजन कुमार(नेट)*

भूमिका:-भारत में ब्रिटिश राज्य की स्थापना दुनिया के इतिहास की एक महत्वपूर्ण घटना थी। 1600 ई. में ईस्ट इंडिया कम्पनी जब महारानी एलिजाबेथ से आज्ञा लेकर भारत से व्यापारिक सम्बन्ध स्थापित करने आई थी, तब मुगल शासन अपने उत्कर्ष पर था। किसी ने यह कल्पना भी नहीं की थी कि व्यापारी के तराजू का दंड यहाँ राजदंड बनकर जुल्म और सितम की इन्तहाँ करेगा। पिट के इंडिया एक्ट तथा रेग्युलेटिंग एक्ट द्वारा अंग्रेजी राजमुकुट का नियंत्रण ईस्ट इंडिया कम्पनी पर बढ़ने लगा था किन्तु अपने देश के हित संवर्धन का ध्यान रखते हुए ईस्ट इंडिया कम्पनी के स्वार्थी अधिकारियों ने धीरे-धीरे भारत के उत्तरी राज्यों को जीत लिया। 1757 के प्लासी युद्ध के बाद वह बंगाल पर आधिपत्य स्थापित करने में सफल हो गए। 1764 में उन्होंने बक्सर के युद्ध में मुगल शासक शाह आलम को पराजित किया तथा 1803 में मराठों को पराजित कर आगरा पर अधिकार कर लिया। इस नवसृजित राज्य का प्रशासन उचित प्रकार से संचालित करना ईस्ट इंडिया कम्पनी की जिम्मेदारी थी। ब्रिटिश सरकार ने ईस्ट इंडिया कम्पनी पर अपना नियंत्रण धीरे-धीरे बढ़ाया तथा उसे विवश किया कि उसकी प्रशासनिक नीति के द्वारा ब्रिटिश अर्थ-व्यवस्था की आवश्यकताओं की पूर्ति अनिवार्य रूप से की जाय।[1]

कम्पनी काल में पुलिस की भूमिका:-आरम्भ में कम्पनी ने भारत स्थित अपने इलाकों का प्रशासन भारतीयों के हाथों में छोड़ दिया था। उसकी गतिविधियाँ मात्र देख-रेख तक ही सीमित रह गई थीं। किन्तु उसने शीघ्र ही समझ लिया कि प्रशासन के पुराने तौर तरीकों का अनुसरण करने से ब्रिटिश उद्देश्य ठीक से प्राप्त नहीं हो सकते। फलस्वरूप कम्पनी ने प्रशासन के कुछ पहलुओं में कार्नवालिस के शासन काल में (ऊपर के प्रशासन में) आमूल परिवर्तन किया और नई व्यवस्था की नींव अंग्रेजी प्रशासन ढाँचे के तर्ज पर रखी गई। नए क्षेत्रों में ब्रिटिश सत्ता के विस्तार, नई समस्याओं, नई आवश्यकताओं, नए अनुभवों और नए विचारों के फलस्वरूप उन्नीसवीं सदी में प्रशासन की व्यवस्था में अधिक गम्भीर परिवर्तन हुए। मगर इन परिवर्तनों के दौरान

***शोध निर्देशक-सह-रीडर राजनीतिशास्त्र विभाग एच.डी.जैन कॉलेज, आरा**
***शोधार्थी, इतिहास विभाग वीर कुँवर सिंह विश्वविद्यालय, आरा।**

साम्राज्यवाद के व्यापक उद्देश्यों को कभी नहीं भुलाया गया तथा भारत में साम्राज्यवादी शोषण चरम सीमा तक किया गया।[2] भारत खासकर बंगाल-बिहार के प्रशासन को चुस्त दुरूस्त करने के लिए पुलिस के अधिकारों में वृद्धि की गई।

भारत में ब्रिटिश प्रशासन तीन स्तंभों पर टिका हुआ था। वे थे नागरिक सेवा (सिविल सर्विस), सेना और पुलिस। ऐसा दो कारणों से था-पहला कारण, ब्रिटिश भारत के प्रशासन का मुख्य लक्ष्य कानून और व्यवस्था को बनाए रखना तथा ब्रिटिश शासन को स्थायी बनाना था। कानून व्यवस्था के अभाव में ब्रिटिश सौदागर और ब्रिटिश विनिर्माता अपनी वस्तुओं को भारत के कोने-कोने में बेचने की उम्मीद नहीं रख सकते थे। फिर विदेशी स्वामी होने के कारण अंग्रेज भारतीय जनता का स्नेह पाने की आशा नहीं कर सकते थे। इसीलिए उन्होंने भारत पर अपना नियंत्रण बनाए रखने के लिए जन समर्थन के बदले शक्ति का सहारा लिया। ड्यूक ऑफ बेलिंग्टन, जिसने अपने भाई लार्ड वेलेजली के मातहत भारत में काम लिया था-यूरोप जाने पर लिखा[3] :

''भारत में सरकार की व्यवस्था, सत्ता की नींव और उसे सँभाले रखने तथा सरकार के कार्यकलापों को चलाने के तौर-तरीके समान उद्देश्य के लिए यूरोप में अपनाए गए तौर-तरीकों से बिलकुल भिन्न हैं वहाँ सम्पूर्ण सत्ता की नींव और उपकरण तलवार है। अत: भारत में पुलिस को हर हालत में मजबूत बनाना होगा और इसलिए पुलिस के अधिकारों में वृद्धि की गई।''

पुलिस ब्रिटिश शासन का महत्त्वपूर्ण स्तम्भ थी। उसका सृजन करने वाला कार्नवालिस था। उसने जमींदारों को पुलिस कार्यों से मुक्त कर दिया और कानून तथा व्यवस्था बनाए रखने के लिए एक नियमित पुलिस दल की स्थापना की। इसके लिए उसने थानों की पुरानी भारतीय व्यवस्था को लिया और उसे आधुनिक बनाया। दिलचस्प बात यह है कि पुलिस व्यवस्था के मामले में भारत ब्रिटेन से आगे हो गया। उस समय तक ब्रिटेन में पुलिस व्यवस्था विकसित नहीं हुई थी। कार्नवालिस ने थानों की व्यवस्था स्थापित की। हर थाने में प्रधान दारोगा होता था। दारोगा भारतीय होता था। बाद में, पुलिस के जिला सुपरिंटेंडेंड(अधीक्षक) का पद बनाया गया। सुपरिंटेंडेंट जिले में पुलिस संगठन का प्रधान हो गया। पुलिस में भी भारतीयों को सभी ऊँचे ओहदों से अलग रखा गया। गाँवों में पुलिस की जिम्मेदारियों को चौकीदार निभाते थे जिनका भरण-पोषण गाँव वाले करते थे। पुलिस धीरे-धीरे डकैती जैसे प्रमुख अपराधों को कम करने में सफल हो गई। पुलिस ने विदेशी नियंत्रण के विरुद्ध बड़े पैमाने पर षड्यंत्रों को भी रोका और जब राष्ट्रीय आन्दोलन का उदय हुआ तब पुलिस का इस्तेमाल उसे दबाने के लिए किया गया। लोगों के साथ व्यवहार में भारतीय पुलिस ने असहानुभूतिपूर्ण रुख अपनाया। संसद की एक समिति ने 1813 की अपनी एक रिपोर्ट में बताया, ''पुलिस ने शान्तिप्रिय निवासियों को उसी तरह लूटा मारा जैसे डकैत करते थे, जबकि डकैतों को दबाने के लिए उसका गठन किया गया था।''[4]

जहाँ तक पुलिस का सवाल है, वह जनता का रक्षक होने की स्थिति से कोसों दूर रही। इस सम्बन्ध में जनता की भावना कुछ तथ्यों से ज्ञात होती है। एक रेगुलेशन के अनुसार, ''अगर कोई डकैती हुई तो पुलिस को तब तक जाँच करने की मनाही है जब तक लूटे गए व्यक्ति उसे नहीं बुलाएँ। कहने का मतलब यह है कि गड़ेरिया भेड़िए से बड़ा भुक्खड़ हिंसक पशु है।''

1857 के विद्रोह के बाद भारतीय प्रशासन को पहले की तुलना में प्रतिक्रियावादी बना दिया गया और पूर्व में जो उदारवादिता का दिखावा किया जा रहा था उसे भी बन्द कर दिया गया। शासन की मंशा को और उसकी नीति को ऐसे कथनों द्वारा विशेष रूप से परखा जा सकता है जो 1861 में संसद में इंडियन काउंसिल बिल पेश करते हुए भारत सचिव चार्ल्स वुड ने कहा था, ''सारे अनुभव हमें यही बताते हैं कि जब तक विजेता जाति दूसरी जाति पर शासन करती है तो एक निरंकुश सरकार ही शासन का सबसे नरम रूप हो सकती है।''[5] भारत सचिव चार्ल्स वुड का कथन शत प्रतिशत उचित जंचता है क्योंकि ब्रिटिश सरकार का हथियार सचमुच पुलिस ही था।

परन्तु उन्नीसवीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध में जहाँ ब्रिटिश शासन की नीतियों को निरंकुशता एवं प्रतक्रियावादिता के आधार पर संचालित किया गया वहीं भारतीय राष्ट्रवादी आन्दोलन एवं विचारधारा विशेष रूप से विदेशी प्रभुत्व को चुनौती देने के लिए कटिबद्ध नजर आ रही थी।

1857 में जनता के विद्रोह ने ब्रिटिश सरकार की चूलें हिला कर रख दी थीं। इस विद्रोह का मुख्य केन्द्र उत्तर भारत में कानपुर, लखनऊ, बरेली, झाँसी, फैजाबाद, शाहाबाद, जगदीशपुर तथा कुछ समय तक मंगल पाण्डे द्वारा लगाई आग जो बंगाल के बैरक में लगी थी, उत्तर बिहार के सारन, चंपारण, मुज्जफरपुर, दरभंगा आदि स्थानों में विशेष रूप से केन्द्रित रहा।

यद्यपि 1859 के अन्त तक भीषण दमन चक्र चलाकर ब्रिटिश शासन पुनर्स्थापित कर दिया गया था परन्तु कानून व्यवस्था को चुनौती देने/अपराध स्थिति को प्रभावित करने का जो बीजारोपण इस दौरान हुआ उसी के प्रभाव आगे आने वाले वर्षों में दिखाई दिए। पुलिस बल का सावधानी से पुनर्गठन किया गया। मसलन 1857 के विद्रोह के बाद सरकार ने पुलिस की संख्या बल को घटाने का निर्णय बहुत ही सोची-समझी नीति के तहत लिया। 1859-60 में अवध में पुलिस बल की संख्या में भारी कमी की गई और मई, 1861 में पुलिस की संख्या 8,523 हो गई। मई, 1862 में यह संख्या 8,263 हो गई। 1870 और 1871 में नार्थ वेस्ट प्रॉविन्स और अवध में नियमित पुलिस की संख्या में कमी की गई।[6] शासन ने उपलब्ध पुलिस बल को कारगर हथियारों, आग्नेयास्त्रों से सुसज्जित करने की नीति भी अपनाई। 1881 में जहाँ आग्नेयास्त्रों से सुसज्जित सिपाहियों का प्रतिशत 40 था वहीं 1891 में यह बढ़कर 46 हो गया। इसी प्रकार बंगाल, बिहार, उड़ीसा तथा पंजाब प्रान्तों में पुलिस बल की कटौती से लगभग 70 से 80 हजार डालर की बचत का दावा किया गया।

राष्ट्रवादिता के उफान के इस दौर में ब्रिटिश सरकार के लिए भारी भरकम भारतीय पुलिस बल को देश भक्ति से बचाए रखना दुष्कर कार्य प्रतीत हो रहा था। पुलिस बल के ब्रिटिशपरस्त बने रहने में सन्देह की स्थिति पैदा हो रही थी इसलिए एक सोची-समझी नीति के तहत पुलिस बल को कम संख्या में बाँधे रखने की नीति अपनाई गई। पुलिस बल को कारगर बनाए रखने के लिए उसके गठन के दो विकल्प मौजूद थे :

1. पुलिस में भारी संख्या में लोगों को भरती कर बल की ताकत बढ़ाई जाए।
2. संख्या कम रखकर तथा उसे विधिवत प्रशिक्षित कर कारगर हथियारों से लैस रखा जाए।[7]

ग्रामीण पुलिस का पुनर्गठन किया गया और 1872 में उसे पूर्व में दी जाने वाली सुविधाओं के अतिरिक्त तीन रुपये प्रति माह की मजदूरी भी उपलब्ध कराई गई। ग्रामीण पुलिस को 1873-74 में सड़कों पर पहरेदारी का दायित्व भी सौंपा गया। ग्रामीण पुलिस का, गाँव-गाँव तक ब्रिटिश सरकार का शिकंजा एवं उसकी पकड़ बनाए रखने के लिए इस्तेमाल किया गया। अपराध स्थिति पर नियंत्रण रखना ग्रामीण पुलिस का एक उद्देश्य तो था ही साथ-साथ बढ़ती हुई राष्ट्रवादिता के दौर में गाँव-गाँव तक ग्रामीण पुलिस के माध्यम से अभिसूचना एकत्र करना भी था। लेफ्टिनेंट गवर्नर सर आकलैंड काल्विन ने यह महसूस किया, ''चूँकि पूरे उत्तर भारत में फैले अपराधी एक-दूसरे के सम्पर्क में रहते हैं जबकि विभिन्न प्रान्तों की पुलिस सीधे सम्पर्क में नहीं रहती है। इसलिए देश भर की पुलिस की कार्य प्रणाली को प्रकाश में लाने के लिए एक केन्द्रीय ब्यूरो की स्थापना होनी चाहिए और यह कार्य ठगी और डकैती के कार्यालय के माध्यम से सम्पन्न हो सकता है।''[8]

सर आकलैंड का यह चिन्तन वास्तविक अपराधियों के लिए नहीं बल्कि राष्ट्रीय स्तर पर चल रही राष्ट्रवादी आन्दोलनकारियों और उनके नेताओं के बीच जुड़े सम्पर्क सूत्र से निपटने के लिए था।

पुलिस बल को ब्रिटिश सरकार के प्रति निष्ठावान बनाए रखने के लिए पारितोषिक प्रदान किए जाने की नीति पर भी सरकार ने गम्भीरता से विचार किया। श्री डब्ल्यू काये की समिति ने यह सिफारिश की कि विशेष जासूसी की क्षमता का प्रदर्शन करने पर सिपाहियों को और चौकीदारों को सदाचरण भत्ता और उदार इनाम भी दिया जाना चाहिए।[9]

राज्य पुलिस तंत्र ब्रिटिश सरकार की अक्षुण्णता को बनाए रखने तथा साम्राज्यवादी प्रशासन को मजबूती प्रदान करने वाला सबसे प्रभावशाली संगठन था। इसलिए सरकार पुलिस की अक्षमता को लेकर विशेष गंभीर बनी रही। पुलिस की अक्षमता पर इसी प्रकार की नजदीकी दृष्टि रखना, बढ़ते हुए राष्ट्रवादी आन्दोलन के दबाव में और भी आवश्यक हो गया था, क्योंकि ब्रिटिश सरकार की अक्षुण्णता का सम्पूर्ण ढाँचा इसी संगठन की सफलता पर टिका हुआ था। देश प्रेम एवं राष्ट्रवाद की

भावना के उभार में पुलिस तंत्र दोहरी मार झेल रहा था।[10] एक ओर जहाँ जन सामान्य में ब्रिटिश सत्ता के पोषक संगठनों पर प्रहार करने की प्रवृत्ति बलवती हो रही थी, वही राष्ट्रवाद और देश प्रेम की भावना कहीं पुलिस तंत्र में न फैल जाए इसका भय भी ब्रिटिश सत्ता के शिखर पर बैठे लोगों को पुलिस तंत्र के प्रति सन्देहशील बना रहा था। मुर्शिदाबाद के कमिश्नर ने लिखा था, ''पुलिस सुधार के बारे में जो निवेदित करने जा रहा हूँ इस धारणा पर आधारित है कि पुलिस प्रशासन की सबसे पिछड़ी इकाई है और यह कि इसका सुधार करना इतना आवश्यक है कि इस कार्य के लिए विचार और धन खर्च करने के लिए ठोस कदम उठाए जाएँ।[11]

अनुभवी जिला अधिकारियों के विचार भी इसी तरह पुलिस भ्रष्टाचार को इंगित करते थे। एक ने कहा, ''मुझे सन्देह है कि पुलिस की सुस्ती और भ्रष्टाचार, का पता लगाने की अक्षमता आदि के कारण अपराधियों के अपराध दर्ज होने से बच जाते हैं, जबकि वास्तविक अपराध में वृद्धि होती है। सिवाय बेहतर वेतन देकर, नियुक्ति में विशेष सावधानी बरतकर, शिक्षा और समझ में उच्च श्रेणी के लोगों को निरीक्षक और उपनिरीक्षक के पदों पर भर्ती करके- मुझे नहीं लगता कि पुलिस को कैसे सुधारा जाएगा। पुलिस की अक्षमता पर इस प्रकार की नजदीकी दृष्टि रखना तथा उसको सक्षम बनाने की ब्रिटिश सरकार की तड़प एवं ललक के पीछे पृष्ठभूमि यही थी कि भावी राष्ट्रवादी आन्दोलन से निपटने के लिए पुलिस बल सक्षम रहना चाहिए।[12]

श्री काये कमेटी ने पुलिस बल के राजपत्रित अधिकारियों, निरीक्षकों और उपनिरीक्षकों, सिपाहियों, प्रधान सिपाहियों की भर्ती की प्रक्रिया एवं उनकी योग्यता को बहुत गम्भीरता के साथ परखने की सिफारिश की। सिफारिशों की खास बात यह थी कि विभिन्न पदों पर नियुक्ति में जो आधारभूत बात तय की जाए वह यह हो कि पुलिस बल स्वाभाविक रूप से पूर्णता के साथ बिना बुद्धि और विवेक को इस्तेमाल किए ब्रिटिशपरस्त रहे। मसलन समिति की यह सिफारिश कि उपनिरीक्षकों की नियुक्ति का अनुमोदन करते समय जिलाधिकारी और पुलिस अधीक्षक यह देखें कि ऐसे लोगों से निकटस्य रिश्तेदारों और पड़ोसियों का चयन वरीयता के आधार पर किया जाए जो पूर्व में राज्य की श्रेष्ठ सेवा किए हुए हों। तात्पर्य यह कि मनोवैज्ञानिक रूप से ब्रिटिश परस्त पारिवारिक संस्कार में पले हुए लोगों को पुलिस बल के लिए चयन करते समय वरीयता दी जाए ताकि किसी भी प्रकार उभरते हुए राष्ट्रवादी आन्दोलन के रंग की छींट पुलिस की वर्दी पर न लगने पाए। इस प्रकार जातीय आधार पर भी उन जातियों को पुलिस बल में तैनात करने की सिफारिश की गई जिनमें सामन्तवादी एवं शोषण के जातीय संस्कार विद्यमान थे क्योंकि ऐसे लोगों के संस्कार ब्रिटिश सत्ताधारियों के साथ मेल खाते थे क्योंकि ब्रिटिश तंत्र का भी आधार शोषण पर ही टिका हुआ था। श्री डब्ल्यू काये का कहना है कि राजपूतों, जाटों, अहीरों, पठानों, पंजाबी मुस्लिमों और अफगान जातियों को नियुक्ति में वरीयता दी जाए- इस तर्क की

पुष्टि करता है। इसी प्रकार समिति की प्रशिक्षण के विषय में दी गई अनुशंसा भी पुलिस बल को ब्रिटिश परस्त बनाए रखना तथा किसी भी प्रकार राष्ट्रवादी उभार से निपटने में कठोर दृष्टिकोण वाला बनाए रखने की मंशा को स्पष्ट करता है।[13]

निष्कर्ष:-ब्रिटिश सरकार एवं तदुनरूप उसका सबसे ज्यादा प्रभावशाली तंत्र पुलिस का लक्ष्य यह था कि वह ब्रिटिश विरोधी कार्य करने वाले लोगों को दबाकर रखे। स्वाधीनता का जो संघर्ष चल रहा था उसे वह निर्ममता पूर्वक दमित करे। आन्दोलनकारियों को एवं देशभक्त जनता को ब्रिटिश सत्ता के विरोध में स्वर न उठाने दे और ब्रिटिश परिभाषा में ऐसे सरकार विरोधियों को नष्ट कर दे। पुलिस ने भी इस कार्य को सफलतापूर्वक अंजाम दिया। जिसे सत्ता के हितों की प्रतिपूर्ति के लिए उसको जन्म दिया गया था, उसको पाला-पोसा गया था, उसको बचाए रखने में भी अन्तिम दम तक वह लगा रहा। यह गहन चिन्तन का विषय है परन्तु इतना संकेत कर देना पर्याप्त है कि इस पूरे दौर में पुलिस संवर्ग के विभिन्न कैडर के लिए ट्रेनिंग (प्रशिक्षण) की जो सोची समझी नीति बनाई गई, प्रशिक्षण को केन्द्र मानकर जो व्यवस्थाएँ सुनिश्चित की गई, उन्होंने ही पुलिस को सफल चरित्र के सम्मान से नवाजा।''

संदर्भ:-

1. पी.ई. रार्बट्स, डयुक वेलिंगटन, ए लेटर, इंडिया अन्डर वेलेस्ली, पृ. 8.
2. सेटेन कोर, द मार्किन्स ऑफ कार्नवालिस एण्ड द कन्सोलिडेसन ऑफ ब्रिटिश रूल, पृ. 13.
3. भारत के बारे में ब्रिटिश संसदीय समिति की रिपोर्ट, 1813, पृ. 1-5.
4. ब्रिटिश पार्लियामेंट में इंडियन कॉसिंल बिल पेश करते हुए भारत सचिव चार्ल्स वुड के भाषण का अंश।
5. विपिन चन्द्रा, द राइज एण्ड ग्रोथ ऑफ इकानामिक नेशनलिज्म इन इंडिया, पृ. 126.
6. (सं.) आर.सी. मजुमार, ब्रिटिश पारामाउन्टैसी एण्ड इंडियनरेनसां, पार्ट- 1, बम्बे, 1963, पृ. 117.
7. रिपोर्ट ऑफ द युनाइटेड प्रोभिन्सेज पुलिस कमिटी, पृ. 40-41.
8. रिपोर्ट ऑफ द एडिमिनिस्ट्रेशन ऑफ बिहार फॉर द इयर 1870-71, पृ. 1-11.
9. एन. डब्ल्यू, पी. गवर्नमेंट, रिलोजुशन, 1872.
10. रिपोर्ट ऑफ द युनाइटेड प्रोभिन्सेज पुलिस कमिटी, 1890-91.
11. रिजोलुशन ऑन 373-VIII-186, डेटेड 6.6.1890 ऑफ द एन. डब्ल्यू, पी. एण्ड द युनाइटेड प्रोभिन्सेज गवर्नमेंट।
12. कार्य समिति की रिपोर्ट, 1890-91, पृ. 13-18.
13. रिपोर्ट ऑफ कमिश्नरस, इंसपेक्टरस एण्ड अदर्स सेक्सन, 12.2.1918,उ 21.11. 1918, भो० 8, 1918, आई.जी.एल एण्ड आर, पृ. 1-20.